

मनुस्मृति में सामाजिक व्यवस्था

Dr Sanju Garg

Lecturer in Sanskrit, Government College Behror

सार

मनुस्मृति जिसे मनु धर्मशास्त्र भी कहा जाता है भारतीय समाज की सबसे प्राचीन और प्रभावशाली सामाजिक एवं नैतिक संहिता है। यह ग्रंथ धर्म और कर्म के सिद्धांतों को प्रतिपादित करता है। संपूर्ण सामाजिक व्यवस्था का दार्शनिक और व्यवहारिक आधार प्रस्तुत करता है। मनुस्मृति में वर्णाश्रम धर्म न्याय व्यवस्था स्त्री की स्थिति शिक्षा प्रणाली राजनीतिक दायित्व और नैतिक आचार संहिता का विस्तृत विवेचन मिलता है। इसका मुख्य उद्देश्य समाज में धर्म नीति और अनुशासन की स्थापना करना था ताकि व्यक्ति और समुदाय दोनों अपने-अपने कर्तव्यों का पालन कर सकें और सामाजिक समरसता बनी रहे। इस शोधपत्र में मनुस्मृति में प्रतिपादित वर्ण व्यवस्था की संरचना स्त्रियों की सामाजिक भूमिका शिक्षा के नैतिक उद्देश्यों दंड और न्याय के सिद्धांतों तथा धर्म और नैतिकता के समन्वय का विश्लेषण किया गया है। साथ ही आधुनिक संदर्भ में इसके प्रभाव और प्रासंगिकता पर भी विचार किया गया है। मनुस्मृति न केवल प्राचीन भारतीय सामाजिक ढाँचे को समझने का एक माध्यम है बल्कि यह भारत की सांस्कृतिक दार्शनिक और नैतिक चेतना का प्रतीक भी है।

मुख्य शब्द मनुस्मृति सामाजिक व्यवस्था वर्णाश्रम धर्म स्त्री की स्थिति शिक्षा व्यवस्था दंड नीति धर्मशास्त्र नैतिकता न्याय व्यवस्था प्राचीन भारतीय समाज।

परिचय

प्राचीन भारत की सामाजिक संरचना धर्म और कर्म के सिद्धांत पर आधारित थी। मनुस्मृति जिसे मनु धर्मशास्त्र भी कहा जाता है ऋषि मनु द्वारा रचित मानी जाती है और इसे स्मृति साहित्य में सर्वाधिक प्रामाणिक ग्रंथ माना गया है। यह वेदों के पश्चात सामाजिक एवं धार्मिक जीवन के संचालन हेतु मार्गदर्शक ग्रंथ के रूप में स्वीकृत हुआ। मनुस्मृति केवल धार्मिक आचरणों का ही नहीं बल्कि संपूर्ण सामाजिक जीवन कृ परिवार विवाह शिक्षा राजनीति और न्याय कृ का भी प्रतिपादन करती है। यह ग्रंथ लगभग दूसरी शताब्दी ईपू से दूसरी शताब्दी ईस्वी के मध्य रचा गया माना जाता है।

स्मृतिग्रंथों में निर्विवाद रूप से मनु स्मृति सर्वप्रमुख एवं सर्वमान्य है। ऐसा प्रतीत होता है की यह सर्वप्राचीन भी है इसके रचना काल के विषय में कुछ ठोस नहीं कहा जा सकता है फिर भी विद्वानों ने विभिन्न साक्ष्यों के आधार पर मनु स्मृति का काल निर्धारण करते हुए इसे पाँचवीं शताब्दी के पूर्व का माना जाता है वर्तमान मनु स्मृति बारह अध्यायों तथा 2694 श्लोकों में निबद्ध है। यह आगे चल कर सबसे प्रसिद्ध स्मृतिग्रंथ प्रमाणित हुआ फलस्वरूप इस पर अनेक टीकाकार हुए जिसमें मे धामिथि कुल्लूक और गोविंदराज के अतिरिक्त नारायण राघवानन्द नंदन और रामचंद्र प्रमुख हैं। मनुस्मृति अन्य स्मृतिग्रंथों का आधार भी माना जाता है। भारतीय मान्यताओं के अनुसार मनु प्रथम समाज व्यवस्थापक तथा मानव जाति के आदि पुरुष हैं मनु के द्वारा प्रतिपादित नियमों का उल्लेख

मनुस्मृति में सुरक्षित है। मनुस्मृति का दूसरा नाम मानव धर्मशास्त्र भी है मनु आचार को ही मरम धर्म मानते हैं और इसकी विशुद्ध व्याख्या मनुस्मृति में परिलक्षित होती है।

मनुस्मृति का महत्व ,वर्तमान

वर्तमान भारतीय समाज संक्रमण काल से गुजर रहा है। संक्रमणकालीन परिस्थितियाँ सर्वदा कई समस्याओं को उत्पन्न करती हैं। हमारे भारतीय समाज के सम्मुख भी अनेक बौद्धिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक समस्याएँ विद्यमान हैं। इसमें प्रथम तो अत्यंत महत्वपूर्ण समस्या है। पुरातन एवं नवीन प्रथाओं एवं पद्धतियों के मध्य सामान्यस्व स्थापित करना है एक ओर तो हमारे समाज में प्राचीन व्यवस्थाओं एवं मान्यताओं का व्यापक प्रभाव है तो वहीं दूसरी ओर आधुनिक वैज्ञानिक मान्यताएँ समानता लोकतंत्र एवं समाजवाद के सिद्धांत आर्थिक और सामाजिक नियोजन तथा कल्याणकारी सामाजिक पुनर्रचना की मान्यताएँ भी काफी शक्तिशाली हैं। समाज में नवीनता के प्रति प्रबल आग्रह परिलक्षित हो रहा है तथा स्वाभाविक रूप से अतीत के विश्लेषण के प्रति मन शंकालु हो सकता है और इसकी उपयोगिता को अस्वीकार कर सकता है। लेकिन यदि हमें एक सशक्त तथा समृद्ध भविष्य की रचना करनी है तो अतीत के ज्ञान एवं अनुभवों से लाभ उठाने का प्रयास भी करना होगा।

वर्तमान समय में यह प्रश्न विचारणीय है कि इतनी समृद्ध बौद्धिक एवं सांस्कृतिक सम्पदा तथा उच्चतम उपलब्धियों के रहने के उपरांत भी वे कौन सी मूलभूत दुर्बलताएँ थीं जिनके कारण हमारा समाज भारतीय राष्ट्र की इतनी अधोराती हुई तथा राजनीतिक एवं आर्थिक दृष्टि से यह विदेशियों के सम्मुख टिक न सकी। प्राचीन भारतीयों के चिंतन के विषय में एक भ्रान्ति व्याप्त है कि भारतीयों का चिंतन ठोस सामाजिक समस्याओं एवं यथार्थ से संबंधित न होकर मात्र दार्शनिक एवं कल्पना होकर रह गया। परन्तु भारतीय सामाजिक संगठन की सैद्धांतिक व्याख्या के संबंध में मनुस्मृति से अधिक प्रामाणिक ग्रंथ और कोई ग्रंथ नहीं माना जाता है विभिन्न पौराणिक आख्यानो दंतकथाओं आदि से सूक्ष्म अध्ययन से हमें यह स्वीकार करना पड़ेगा कि मनुस्मृति अथवा मानव धर्मशास्त्र में वर्णित नियम लम्बी परंपरा की देन है मनुस्मृति की रचना किसी व्यक्ति के जीवन काल से संबंधित न होकर एक संपूर्ण ऐतिहासिक काल एवं परंपरा से संबंधित है जिसे हम वैदिक काल की संज्ञा दे सकते हैं। मनु स्मृति के अनुसार सृष्टि के आरम्भ में ब्रह्मा ने विराट् पुरुष को उत्पन्न किया और उसी विराट् पुरुष से मनु की उत्पत्ति हुई। मनु ही आदि पुरुष है जिन्होंने प्रजा की इच्छा से तप करके अन्य दसप्रजापति महाऋषियों को उत्पन्न किया जिनके नाम मरीचि अत्रिअंगिरा बुलिस्तस्य त्रदातु वशिष्ठ भृगु तथा नारद हैं।

मनु स्मृति का दूसरा नाम मानव धर्म शास्त्र भी है आज विज्ञान का युग है विज्ञान का ही दूसरा पर्याय साक्ष है। प्राचीन भारतीय परंपरा ने सामाजिक व्यवस्था लिए कुछ शास्त्रीय सिद्धांतों की विकसित किया था जो की मनु स्मृति में संग्रहित है। आधुनिक युग के समाजशास्त्र एक नया विज्ञान है जिसमें विभिन्न सामाजिक रचना के सम्बन्ध में विचार किया जाता है। लेकिन हमारे प्राचीन भारतीय मनीषियों को तो पहले ही उन सभी महत्वपूर्ण विषयों पर अपने विचार प्रकट कर चुके हैं। आधुनिक समाजशास्त्र में मानवीय किया एवं व्यवहारों के अध्ययन पर जोर दिया जाता है मनु स्मृति में भी आचार को ही परम धर्म मानते हुए इसकी बिसुद्ध व्याख्या की गई है। मनु स्मृति में प्रतिप्राय नियम किसी दिन की उत्पत्ति नहीं है बल्कि संपूर्ण ऐतिहासिक काल का प्रतिनिधित्व करते हैं। मनु स्मृति में नियमों का प्रचलन किस काल से हुआ यह कहना अत्यंत कठिन है। क्योंकि इसमें प्रचलित नियम आज भी हिन्दू जीवन पद्धति के अभिन्न अंग हैं। प्रोफेसर व्हियुलर के मतानुसार मनु स्मृति विधान की सर्वाधिक प्राचीन पुस्तक है। इसकी रचना ईसा से दो सदी पूर्व और दो सदी बाद के काल में हुई। उन्होंने मनु स्मृति में प्रयुक्त

काबोज यवन तथा शक शब्दों को प्रस्तुत किया। इनका कहना है की इसी अवधि में भारतीयों का सम्बन्ध विदेशियों से हुआ। जगत की रचना की व्याख्या करते हुए मनु एक सर्वोच्चा सत्ता में विश्वास रखते हैं। जिनकी इच्छा से ही विश्व में सृजन तथा विनाश होता है और वह ही जड़ चेतन सबका कारण अनन्त तथा सनातन है।

आधुनिक समाज शास्त्र एवं मनोविज्ञान में यह धारणा है की मानवीय जीवन ओर इसके पर्यावरण का प्रभाव पड़ता है वही हमारे प्राचीन भारतीय मान्यता में भी भौतिक जगत पर मनुष्य के आंतरिक गुणों एवं नैतिक नियमों का प्रभाव पड़ता है। समाज के नैतिक जीवन में व्याप्त अराजकता प्रकृति के क्षेत्र में भी अराजकता पैदा कर देती है।

उद्देश्य

- 1^० धर्म के आधार पर समाज का संचालन।
- 2^० व्यक्ति के आचरण को नियमों से बाँधकर नैतिकता की स्थापना।
- 3^० राजा और प्रजा दोनों के लिए आचार.संहिता का निर्धारण।

मनुस्मृति में शूद्रों की सामाजिक स्थिति

शूद्रों की उत्पत्ति. शूद्रों के उत्पत्ति के सम्बन्ध में कोई एक स्पष्ट मत नहीं है। यह माना जाता है शूद्र और दास एक दूसरे पर्याय है अर्थात् दास ही शूद्र थे जिनका हमारे वेदों बहुशः उल्लेख किया गया है। यूरोप से आये आर्य लोग गौरवर्ण के और एशिया तथा अफ्रीका के लोगों की गौरेतर कहा जाता है। आर्यों के देवता इन्द्र को दासों का विजेता माना गया है ये दास मानव ही रहे होंगे। वेदों में कहा गया है कि इन्द्र ने अधम दास वर्ण को गुफाओं में रहने के लिए बाध्य किया था। ऋग्वैदिक स्तुतियों में इन्द्र से प्रार्थना की गयी है कि वे दास जनजाति विश्द्ध नष्ट करे। इससे यह परिलक्षित होता है कि दास के सामाजिक कृत्य निकृष्ट थे जिससे उसे समाज में हेय माना गया तथा सभी प्रकार से नष्ट करने का आह्वान किया गया। ऋग्वेद में एक स्थान पर उसे नष्ट करने वाले दास वर्ग को आगे चलकर शूद्रों की श्रेणी में रख दिया गया। यद्यपि ऋग्वेद में शूद्रों के विषय में स्पष्ट रूप से कुछ नहीं कहा गया फिर ऋग्वेद के दशवें मण्डल में इनके उत्पत्ति से सम्बन्धित एक मन्त्र प्राप्त होता है जिसमें चारों वर्णों की उत्पत्ति ब्रह्म से मानी गयी है। मनुस्मृति में इसी मन्त्र के आधार शूद्रों की उत्पत्ति के बार में कहते हैं ब्रह्मा ने समाज के कल्याणार्थ चारों वर्णों को उत्पन्न किया।

लोकानां तु विवृद्ध्यर्थं मुखवाहरूपादतः।

ब्राह्मणं क्षत्रियं वैश्यं शूद्रं निर्वर्तयत्॥

शूद्रों की सामाजिक स्थिति. आचार.व्यवहार

किसी समाज में करणीय कृत्यों को मान्यता देना और अकरणीय कृत्यों की निन्दा करना सामाजिक मापदण्ड स्थापित करने का आधार है। किसी समाज के व्यक्तियों द्वारा किये गये व्यवहारों से उस समाज का मूल्यांकन किया जाता है स्मृतिकाल की सामाजिक व्यवस्था वर्णव्यवस्था पर आधारित थी जिसमें प्रत्येक वर्ण के लिए उसके कार्य निर्धारित थे इन्हीं कृत्यों का पालन करना आचार.व्यवहार कहा जाता है स्मृतिकार कहते हैं कि

ऐसे ब्राह्मण जो अभिवादन का प्रतिद्वन्द्व उत्तर देना नहीं जानता उसको विद्वत् समाज द्वारा सम्मान नहीं दिया जाना चाहिए क्योंकि ऐसा ब्राह्मण शूद्र के समान होता है।

यो न वेत्यभिवादस्य विप्रः प्रत्यभिवादनम्।

नाऽभिवाद्यः स विदुषा यथा शूद्रस् तथैव सः॥ 2^ण126 दृष्ट

शूद्रता को कोई भी व्यक्ति प्राप्त हो सकता था यह उसके कृत्यों पर निर्भर करता है शूद्र समाज सामाजिक निष्कृष्टता का द्योतक था क्योंकि ब्राह्मणों की शूद्रता की प्राप्ति उसका संकेत करती है जो अन्य वर्ण की प्राप्ति का निषेध करती है। शूद्रों को अभिवादन के सम्बन्ध में स्मृतिकार कहता है कि ऐसा ही शूद्र अभिवादन या सम्मान के योग्य होता है जो 90 वर्ष की अवस्था को प्राप्त कर लिया हो।

पंचानां त्रिषु वर्णेषु भूयांसि गुणवंती च।

यत्र स्युः सोऽत्र मानार्हः शूद्रोऽपि दशमी गतः॥

इस प्रकार की विधि करना सामाजिक विषमता की ओर संकेत करती है क्योंकि हमारे समाज में 100 वर्ष की जो व्यवस्था की गयी थी उसमें अन्तिम दशम की प्राप्ति कम ही व्यक्तियों को होगी इससे शूद्र वर्ण में अत्यन्त अल्प व्यक्ति ही सम्मान को प्राप्त करने वाले होंगे।

नामकरण . महर्षि मनु नामकरण संस्कार में वर्णक्रम की मान्यता पर अत्यधिक बल दिया है जो यह प्रमाणित करता है शूद्रों की स्थिति निम्नतर थी। मनुस्मृति बताती है समाज का सर्वश्रेष्ठ वर्ण ब्राह्मण का नाम मंगल सूचक शब्द से युक्त क्षत्रिय का शौर्य सूचक शब्द वैश्य का नाम द्रव्य सूचक शब्द से युक्त और शूद्र का निन्दित शब्द से युक्त नामकरण करना चाहिए। अपने सैद्धान्तिक मत को पुष्ट करने के लिए मनु कहते हैं कि चारों वर्णों के उपनाम में क्रम इस प्रकार से रखना चाहिए जिससे सुखशान्ति रक्षा समृद्धि और सेवा का भाव प्रकट हो। स्मृति टीकाकार कुल्लूकभट्ट कहते हैं कि ब्राह्मण का यथा शुभ शर्मा मंगलदेव क्षत्रिय का यथा बल वर्मा विजय प्रताप वर्मा वैश्य का जैसे वसुभूति कुबेरदत्त और शूद्र का जैसे दीनदास दीनदयाल से युक्त नामकरण करना चाहिए।

शमदेवश्च विप्रस्यवर्मात्रा च भू भुजः।

भूतिर्दत्तश्च वैश्यस्य दासः शूद्रस्य कारदेत्॥

सामाजिक मेल.जोल ;मित्रता

किसी समाज के सामाजिक सौहार्द में उस समाज के साहित्य और शास्त्रों का महत्वपूर्ण स्थान होता है क्योंकि इन्हीं माध्यमों के द्वारा सामाजिक संस्कृति और प्रथाओं का निर्माण होता है इसी कारण साहित्य को समाज का दर्पण कहा गया है। मनुस्मृति में सामाजिक विभेदता के कुछ लक्षण स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं स्मृति में शूद्रों की मित्रता का वर्जन किया गया है क्योंकि मनुस्मृति कहती है कि स्वकुल को उत्कर्ष बनाने के लिए ब्राह्मण सर्वदा अपने से बड़े के साथ सम्बन्ध स्थापित करें तथा अपने से नीचों का परित्याग कर दे। इसके विपरीत कृत्य करने वाला शूद्रता को प्राप्त होता है। इस प्रकार से शूद्रों को समाज में निम्न श्रेणी की ओर इंगित करके मित्रता से

वंचित रखने का प्रयत्न किया गया है। एक ओर शूद्रों को जहां सेवा का अधिकार देकर मित्रता से वंचित रखना समाजिक विरोधाभास का अहसास कराती है क्योंकि वह सेवा तो कर सकता था परन्तु मित्र नहीं बन सकता था।

अन्ननिषेध ६

स्मृतिकार के अनुसार स्नातक को शूद्र का अन्न ग्रहण नहीं करना चाहिए क्योंकि शूद्र का अन्न ब्रह्मवर्चस, ब्रह्मतेजस् को नष्ट करता है। महर्षि मनु का मानना है कि विद्वान् ब्राह्मण श्राद्ध आदि पञ्चमहायज्ञ की क्रिया विधान से रहित शूद्र के पकवान न खाये किन्तु खाने के लिए दूसरा अन्न नहीं रहने पर शूद्र से एक रात्रि को भोजन करने योग्य कच्चे अन्न को प्राप्त किया जा सकता है। जीविका के अभाव से आपत्ति में पड़ा हुआ ब्राह्मण सभी से दान ग्रहण करें क्योंकि स्वभाव से ही पवित्र वस्तु दूषित हो जाता है यह बात धर्म से उत्पन्न नहीं होती है। इस प्रकार यदि ब्राह्मण गृहस्थ के घर शूद्र अतिथि धर्म से आ जाये तो ब्राह्मण को उसके प्रति दया भाव प्रकट करना चाहिए तथा उसे अपमानित नहीं करना चाहिए उसकी मूल्यों के साथ भोजन कराना चाहिए।

शूद्रों के प्रति पृथक् प्रथायें.

मनुस्मृति के पर्यालोचन से स्पष्ट होता है कि शूद्र समाजिक परम्पराओं में पूर्णतः अलग-थलग था जो अधिकार उच्च वर्णों को प्राप्त थे शूद्रों को उनसे वंचित किया गया। स्मृति ब्राह्मणों के लिए चार विवाहों की अनुमति देती है क्षत्रिय के लिए श्राक्षस विवाह और वैश्य तथा शूद्रों के लिए एक मात्र आसुर विवाह को प्रशसनीय माना गया है।

चतुरो ब्राह्मणस्याऽऽद्यान् पूरिचान् कवयो विदुः।

राक्षसं क्षत्रियस्यैकमासुरं वैश्यशूद्रयोः॥ ३७²⁴

मातृ प्रधानता ६

प्राचीन भारतीय समाज में पितृसत्तात्मक व्यवस्था थी जिसमें पिता या पुरुष को परिवार का मुखिया या प्रधान माना जाता था। यही प्रथा आज भी भारतीय समाज में विद्यमान है। लेकिन इस पुरुष प्रधान समाज में महिलाओं के अधिकारों में व्यापक परिवर्तन आया है। मनुस्मृति नारी को लक्ष्मी के समान स्थान प्रदान करती है वह कहता है यत्र नार्यास्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।^{१६} चार प्रकार के विवाह से विवाहित स्त्री जो धन अपने पिता से प्राप्त करती है वह स्वयं उसकी उत्तराधिकारिणी होती है लेकिन सन्तानहीन होने पर उसके धन का अधिकारी पति होता है। किन्तु आसुर राक्षस तथा पैशाच संज्ञक विवाहों में स्त्री को प्राप्त धन सन्तानहीन मृत्यु होने पर माता-पिता को अधिकार दिया गया है। यहां पर यह स्मरण रखना जरूरी है कि असुर इत्यादि विवाह शूद्रों में सम्पादित होते थे इसलिए शूद्रों द्वारा व्यवहृत वैवाहिक परम्पराओं और उनके समाज में मातृ पक्ष को विशिष्ट स्थान प्राप्त था।

वैवाहिक स्थिति ६

मनुस्मृति में आठ प्रकार के विवाह वर्णित किये गये हैं जिसमें कुछ सामाजिक रूप से प्रतिष्ठित तथा कुछ को निन्दनीय कहा गया है। प्रत्येक वर्ण के लिए पृथक्-पृथक् विवाह का विधान किया गया है। मनुस्मृति अन्तर्वर्णिय

विवाह का निषेध करती है जिसके अनुसार उच्चवर्ण के पुरुष को निम्नवर्णीय स्त्री से विवाह नहीं करना चाहिए। लेकिन यदि कोई द्विजातीय सजातीय तथा विजातीय स्त्रियों के साथ विवाह कर लेता है तो ऐसी स्थिति में उनके वर्णक्रम के अनुसार भाषण, दायभाग, वस्त्राभूषणादि से सत्कृत कर तथा निवास के लिए अलग से घर निर्धारित करना चाहिए। इस प्रकार के प्रावधानों से यह स्पष्ट होता है कि उच्च वर्ण के स्त्री के लिए श्रेष्ठ संसाधन प्राप्त होते थे लेकिन निम्न वर्ण के कलत्र के लिए अपेक्षाकृत कम साधनों से जीवननिर्वाह करना होता था। पृथक गृह में रखना यह प्रदर्शित करता है कि वह परिवार के सदस्य के रूप में गृहीत नहीं है। इस प्रकार के व्यवहार से उसे मानसिक प्रताड़ना होती थी। मनु कहते हैं कि कामवासनादि के भावावेश को द्विजाति हीन जाति, शूद्राद्ध से विवाह करता है तो वह पुरुष सन्तान सहित शूद्रता को प्राप्त हो जाता है। इसकी पुष्टि मनु द्वारा ऋषि विषयक वृत्तान्त से स्पष्ट हो जाता है।

शूद्रवेदी पतत्ये रूथयतनयस्य च।

शौनकस्य सुतोत्पत्तया तदपत्यय भृगोरु॥ 3716

शूद्रों की आर्थिक स्थिति.

शूद्रों का सम्बन्ध दासों के साथ स्थापित लिया गया था लेकिन वे अन्य पदों पर पहुँच कर अपनी स्थिति को सुदृढ़ कर सकते थे। वे ग्राम भोजन, ग्राम मुखियाद्ध मन्त्रीगण और उच्च कुल उत्पन्न व्यक्ति के समान स्थिति को प्राप्त कर सकता था। अधिकतर दास मजदूर शूद्र ही थे। ऋण, क्रय, अपनी इच्छा और भय से उत्पन्न दासता की उम्मीद उच्च वर्ण की अपेक्षा निम्न वर्णों से अधिक की जा सकती है। उदाहरणार्थ एक गाड़ीवान की कन्या अपने पिता द्वारा कर्ण न चुकाए जाने के कारण एक व्यापारी द्वारा दासी के रूप में घर लायी गयी थी। दास और भाड़े के मजदूर खेतों के छोटे-छोटे टुकड़ों में कार्य करते थे। उत्तर वैदिक युग में लोगों के पास उतनी ही जमीन थी जितनी वे अपने घर के सदस्यों की मेहनत से संभाल सकते थे। धर्मसूत्रों में शूद्रों के रहन-सहन के बारे में प्रकाश पड़ता है जिसमें गौतम कहते हैं कि शूद्र नौकर को चाहिए कि वह उच्च वर्ण के लोगो द्वारा उतार फेंके गये जूते, छाते, वस्त्र और चटाई का प्रयोग करे। जातक कथाओं में भी यही स्थिति है जिसमें बताया गया है कि चूहों द्वारा चिथड़े बनाये गये वस्त्र दास और कामगारों के लिए होते थे। आर्थिक दृष्टि से शूद्र धीरे-2 कृषि कार्य में स्थान बना रहे थे तथा अन्य कार्य करने में दक्षता हासिल कर रहे थे जैसा कि मनु ने कहा है कि द्विजों की सेवा की सेवा करने में असमर्थ शूद्र स्त्री, पुत्र आदि के पीड़ित होने पर ऐसे शिल्पी कार्यों की अपना सकता है जिसमें द्विजों की सेवा का भाव निहित हो।

निष्कर्ष

मनुस्मृति भारतीय समाज की सबसे प्राचीन और प्रभावशाली धार्मिक एवं सामाजिक संहिता है जो उस युग की जीवन-दृष्टि और नैतिक मूल्यों का दर्पण प्रस्तुत करती है। इसमें धर्म, कर्तव्य, आचार और नैतिकता के माध्यम से व्यक्ति और समाज के संबंधों को व्यवस्थित करने का प्रयास किया गया। मनुस्मृति ने यह सिद्धांत स्थापित किया कि समाज का संतुलन तभी संभव है जब प्रत्येक व्यक्ति अपने वर्ण, आश्रम और कर्तव्यों का पालन निष्ठा से करे। यद्यपि कालांतर में इसकी व्याख्याएँ कठोर रूप में प्रस्तुत की गईं जिससे वर्णभेद और लैंगिक असमानता जैसी सामाजिक विषमताएँ उभरीं, फिर भी इसका ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्व असंदिग्ध है। मनुस्मृति प्राचीन भारत की सामाजिक, शैक्षणिक और धार्मिक संस्थाओं की संरचना को समझने का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। आधुनिक युग में इसे आलोचनात्मक दृष्टि से पुनः पढ़ने की आवश्यकता है ताकि इसके सकारात्मक नैतिक

सिद्धांत कृ जैसे सत्य संधर्म करुणा और कर्तव्यनिष्ठा कृ को आज के समाज में लागू किया जा सके। इस प्रकार मनुस्मृति केवल अतीत की स्मृति नहीं बल्कि यह संदेश देती है कि धर्म नीति और नैतिकता ही किसी सभ्यता की स्थायित्व की आधारशिला हैं।

संदर्भ ग्रन्थ

- 1^प पं हरप्रसाद शास्त्री ;सम्पादक धर्मशास्त्रों का इतिहास दिल्ली नाग प्रकाशन 1972।
- 2^प शर्मा रामकुमार भारतीय सामाजिक व्यवस्था का विकास नई दिल्ली राजपाल एंड संस 2005।
- 3^प अम्बेडकर भीमराव जाति उन्मूलन 1936।
- 4^प अल्टेकर एएस हिंदू सभ्यता में महिलाओं की स्थिति मोतीलाल बनारसीदास 1959।
- 5^प केन पीवी धर्मशास्त्र का इतिहास भंडारकर ओरिएंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट पुणे 1941।
- 6^प झा डीएन प्राचीन भारत एक परिचयात्मक रूपरेखा दिल्ली पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस 2004।
- 7^प धर्मशास्त्र का इतिहास प्रथम भाग पृष्ठ. 43
- 8^प बीस स्मृतियां प्रथम खंड भूमिका पृष्ठ.18
- 9^प केज धर्मशास्त्र इतिहास प्रथम खंड पृष्ठ 134